



ISSN: 3049-2017

IJMH 2026; 3(5): 64-67

© 2026 IJMH

www.themultijournal.com

Received: 12-09-2026

Accepted: 28-09-2026

Publish : 30-09-2026

डॉ. सूर्यकान्त त्रिपाठी

सहायक प्राध्यापक,

शासकीय महाविद्यालय शाहगढ़, सागर

तुलसीदास की काव्य-दृष्टि और सांस्कृतिक समन्वय : आलोचकीय स्थापनाओं का पुनर्मूल्यांकन

डॉ. सूर्यकान्त त्रिपाठी**शोध-सार**

गोस्वामी तुलसीदास हिन्दी साहित्य की भक्तिकालीन परंपरा के ऐसे महत्वपूर्ण कवि हैं जिनके कृतित्व में भक्ति, लोकजीवन, सामाजिक चेतना, नैतिकता, सौंदर्यबोध, भाषा और सांस्कृतिक परंपरा के विविध आयाम परस्पर संबद्ध दिखाई देते हैं। तुलसी का साहित्य केवल आध्यात्मिक अनुभूति का काव्य नहीं है; उसमें तत्कालीन सामाजिक जीवन, मानवीय संबंधों, नैतिक मूल्यों, लोकमंगल और सांस्कृतिक चेतना के अनेक स्तर अभिव्यक्त हुए हैं। प्रस्तुत शोध-आलेख में रामविलास शर्मा, रामचन्द्र तिवारी, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, उदयभानु सिंह, विश्वनाथ त्रिपाठी, बलदेव प्रसाद मिश्र, रमेश कुंतल मेघ, विष्णुकांत शास्त्री तथा प्रो. बारानिकोव आदि आलोचकों की स्थापनाओं के आधार पर तुलसी के काव्य का अध्ययन किया गया है। आलोचकीय विचारों के माध्यम से तुलसी की काव्य-दृष्टि, सामाजिक दृष्टि, भक्ति-भावना, सौंदर्यबोध, प्रकृति-चित्रण, भाषा-शैली, युगबोध और सांस्कृतिक भूमिका के विभिन्न पक्ष सामने आते हैं। तुलसी के साहित्य में 'उचित का ग्रहण और अनुचित का त्याग', मन-वचन की सरलता, सामाजिक उत्तरदायित्व, नैतिक सौंदर्य, हृदय और विवेक का संतुलन, लोक और शास्त्र का संवाद तथा समन्वयात्मक दृष्टि प्रमुख विशेषताओं के रूप में उभरती हैं। तुलसी की भक्ति में सामाजिक समता और इतरजनों के प्रति संवेदनशीलता का प्रश्न भी है। आलोचकीय पुनर्पाठ से तुलसी का साहित्य लोकमंगल, जीवन-विवेक और सांस्कृतिक समन्वय की व्यापक चेतना का साहित्य सिद्ध होता है।

बीज शब्द: तुलसीदास, भक्ति आंदोलन, रामकथा, लोकचेतना, सामाजिक दर्शन, सांस्कृतिक चेतना, काव्य-दृष्टि, युगबोध, सौंदर्यबोध, समन्वयवाद, सामाजिक समता।

शोध आलेख

हिन्दी साहित्य में गोस्वामी तुलसीदास का विशिष्ट स्थान है। उनका काव्य रामभक्ति से जुड़ा है, किंतु उसकी सीमा केवल धार्मिक अनुभूति तक नहीं है। उसमें व्यक्ति और समाज, धर्म और नैतिकता, लोक और शास्त्र तथा भाव और विवेक के विविध संबंध दिखाई देते हैं। सौंदर्य और मंगल की अवधारणा भी उनकी काव्य-दृष्टि का महत्वपूर्ण पक्ष है। उनके काव्य में धार्मिक आस्था के साथ सामाजिक जीवन की गहरी समझ मिलती है। जिस समय तुलसी की रचनाएँ सामने आईं, वह भारतीय समाज में अनेक प्रकार के परिवर्तन और संकट का दौर था। इस परिवेश की छाप उनकी काव्य-संवेदना पर स्पष्ट दिखाई देती है। उन्होंने पौराणिक कथा को अपने समय की जीवनानुभूति से जोड़ा। तुलसी के काव्य पर आलोचना की समृद्ध परंपरा रही है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने उनके काव्य-सौंदर्य, भाषा, प्रकृति-चित्रण और भक्ति का विवेचन किया। रामविलास शर्मा ने उन्हें व्यापक भारतीय सांस्कृतिक संदर्भ में देखा। रामचन्द्र तिवारी ने उनकी काव्य-दृष्टि और सामाजिक दर्शन को प्रमुखता दी। विश्वनाथ त्रिपाठी ने तुलसी की रामकथा में निहित युगबोध तथा लोकवादी आधार को रेखांकित किया है। प्रस्तुत आलेख में उनकी काव्य-दृष्टि, भक्ति, सामाजिक चेतना, युगबोध, सौंदर्यबोध, भाषा और सांस्कृतिक समन्वय का आलोचनात्मक अध्ययन किया गया है।

तुलसी के साहित्य की पृष्ठभूमि भारतीय भक्ति आंदोलन की व्यापक सांस्कृतिक चेतना में निर्मित हुई। "भक्ति आंदोलन अखिल भारतीय सांस्कृतिक आन्दोलन था, इस आंदोलन की श्रेष्ठ देन थे तुलसीदास।"¹

Correspondence:**डॉ. सूर्यकान्त त्रिपाठी**

सहायक प्राध्यापक,

शासकीय महाविद्यालय शाहगढ़, सागर

रामविलास शर्मा की यह स्थापना तुलसी के काव्य को व्यापक भारतीय सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में समझने का आधार प्रदान करती है। तुलसी ने रामकथा को लोकभाषा में प्रस्तुत करके उसे व्यापक जनसमुदाय से जोड़ा। संस्कृत की धार्मिक-सांस्कृतिक परंपरा से प्राप्त आख्यान जब लोकभाषा में रूपांतरित हुआ, तब उसे लोकजीवन के अनुभवों और संवेदनाओं से जुड़ने का अवसर मिला। रामचरितमानस में राम केवल धार्मिक आराध्य नहीं हैं। उनके चरित्र में मर्यादा, कर्तव्य, त्याग, करुणा, न्याय और लोकहित के मूल्य जुड़े हैं। तुलसी की भक्ति व्यक्ति के आध्यात्मिक अनुभव को सामाजिक आचरण से जोड़ती है। भक्ति का अर्थ केवल आराधना नहीं, बल्कि जीवन-मूल्यों की स्वीकृति भी है। लोकभाषा में काव्य-सृजन ने धार्मिक अनुभूति और साहित्यिक अभिव्यक्ति को जनजीवन के निकट पहुँचाया। तुलसी का काव्य लोक की स्मृति, विश्वास और सांस्कृतिक अनुभव का महत्वपूर्ण हिस्सा बना।

तुलसी के काव्य में मूल्य-विवेक निरंतर सक्रिय रहता है। राम और रावण का चरित्र-विन्यास, भरत का त्याग, विभीषण का निर्णय, हनुमान की सेवा-भावना और सीता का धैर्य—इन सभी प्रसंगों में नैतिक चयन का प्रश्न उपस्थित होता है। डॉ. रामचन्द्र तिवारी तुलसी की काव्य-दृष्टि के विषय में मत देते हुए लिखते हैं—“अनुचित का त्याग और उचित का ग्रहण तुलसी की काव्य दृष्टि की मूल विशेषता है।”² राम का चरित्र उचित के ग्रहण की आदर्श स्थिति प्रस्तुत करता है। वे व्यक्तिगत सुख की अपेक्षा कर्तव्य को महत्व देते हैं। वनगमन का प्रसंग हो अथवा प्रजा के प्रति उत्तरदायित्व, उनके निर्णयों में सामाजिक और नैतिक विवेक सक्रिय है। तुलसी के यहाँ नैतिकता किसी पृथक उपदेश के रूप में नहीं आती। कथा, चरित्र और घटनाएँ उसके माध्यम बनते हैं। काव्यात्मकता और मूल्य-विवेक का यह संबंध तुलसी की रचनात्मक दृष्टि की महत्वपूर्ण विशेषता है। तुलसी के भक्तिमार्ग को समझने में रामचरितमानस का उत्तरकाण्ड विशेष महत्व रखता है। डॉ. रामचन्द्र तिवारी के अनुसार — “रामचरितमानस का उत्तरकाण्ड तुलसी की भक्ति सिद्धान्त प्रतिपादन की दृष्टि से अन्यतम है।”³ उत्तरकाण्ड में तुलसी की भक्ति-दृष्टि अधिक स्पष्ट रूप में सामने आती है। भक्ति यहाँ केवल भावनात्मक समर्पण नहीं, बल्कि व्यक्ति के अंतःकरण के परिष्कार से जुड़ी साधना है। ज्ञान, वैराग्य, विनय, दीनता और प्रेम जैसे तत्व भक्तिमार्ग को व्यापक आध्यात्मिक आधार प्रदान करते हैं। तुलसी की भक्ति में भक्त और आराध्य का संबंध आत्मीयता और समर्पण पर आधारित है। भक्ति व्यक्ति को अहंकार से मुक्त करती है तथा उसके भीतर विनय और करुणा का विकास करती है। इसीलिए तुलसी के भक्तिमार्ग का संबंध नैतिक जीवन और सामाजिक आचरण से भी जुड़ता है। रामचन्द्र शुक्ल मानते हैं - “तुलसी मन की सरलता वचन की सरलता को ही इस भक्ति मार्ग का नित्य लक्षण मानते हैं। इस परम्परा के भक्त में तुलसीदास दुराव छिपाव की प्रवृत्ति को भक्ति विरोधी मानते हैं।”⁴ मन और वचन की सरलता भक्ति को आडंबर से अलग करती है। तुलसी की भक्ति में प्रेम, दीनता, विनय और आत्मसमर्पण जैसे भाव इस मानवीय धरातल को मजबूत करते हैं।

तुलसी के समन्वयवाद का स्वरूप बहुआयामी है। उनके यहाँ भक्ति और ज्ञान, भाव और विवेक, लोक और शास्त्र, धर्म और सामाजिक जीवन, सौंदर्य और मंगल तथा परंपरा और युगानुभव के बीच

संवाद मिलता है। तुलसी के काव्य की एक प्रमुख विशेषता विभिन्न जीवन-मूल्यों के बीच सामंजस्य स्थापित करना है। डॉ. रामचन्द्र तिवारी के अनुसार “सामान्यतः उनका दृष्टिकोण समन्वयात्मक था।”⁵ तुलसी परंपरा को अस्वीकार नहीं करते, लेकिन उसे लोकजीवन की आवश्यकताओं और अपने समय की संवेदना से जोड़ते हैं। उनकी रामकथा शास्त्रीय आख्यान होते हुए लोकभाषा में नया सांस्कृतिक अर्थ प्राप्त करती है। समन्वय तुलसी के लिए मात्र वैचारिक पद्धति नहीं है। यह उनकी काव्य-संरचना और जीवन-दृष्टि दोनों में सक्रिय दिखाई देता है।

“तुलसी साहित्य का जितना महत्व आध्यात्मिक दृष्टि से है, उससे कम लौकिक या सामाजिक दृष्टि से नहीं है। तुलसीदास का भक्तिमार्ग ठोस सामाजिक दर्शन पर आधृत है। उन्होंने सामाजिक समस्याओं की कही भी उपेक्षा नहीं की है।”⁶ उपर्युक्त विवेचन के आलोक में यह कहा जा सकता है कि तुलसी की भक्ति का सामाजिक आधार उनके पात्रों और प्रसंगों में दिखाई देता है। परिवार, राज्य, प्रजा, मित्रता, दायित्व, सेवा, त्याग और लोककल्याण जैसे प्रश्न उनके काव्य में प्रमुख हैं। रामराज्य की कल्पना भी सामाजिक व्यवस्था के आदर्श रूप से जुड़ी है। तुलसी का सामाजिक दर्शन आधुनिक समाजशास्त्रीय सिद्धांत के रूप में व्यवस्थित नहीं है, किंतु उनके काव्य में सामाजिक जीवन के अनेक प्रश्नों पर मूल्यपरक दृष्टि मिलती है। व्यक्ति का आचरण परिवार और समाज से जुड़ा है तथा राजसत्ता का मूल्यांकन लोकहित के आधार पर किया जाता है। भक्ति व्यक्ति को सामाजिक उत्तरदायित्व से विमुख नहीं करती। धर्म आचरण से जुड़ता है और आचरण सामाजिक जीवन से।

तुलसी की सामाजिक चेतना का एक महत्वपूर्ण पक्ष समाज के वंचित अथवा इतर माने गए वर्गों के प्रति उनकी दृष्टि है। डॉ. रामविलास शर्मा लिखते हैं—“गोस्वामी जी ने समाज के इतरजनों का पक्ष लिया और राम प्रेम के आधार पर उनकी समानता की घोषणा की। उनकी भक्ति का यह सामन्त विरोधी मूल्य है, जिसे हमें अपनाया चाहिए और समाज में ऊँच-नीच का भेद सदा के लिए खत्म कर देना चाहिए।”⁷ रामविलास शर्मा की यह स्थापना तुलसी की भक्ति के सामाजिक अर्थ को रेखांकित करती है। तुलसी के काव्य में निषाद, शबरी और अन्य लोकपात्रों की उपस्थिति को केवल कथानक की आवश्यकता मानकर छोड़ देना पर्याप्त नहीं है। इन पात्रों के साथ राम का संबंध भक्ति और मानवीय आत्मीयता के स्तर पर निर्मित होता है। रामप्रेम को सामाजिक निकटता का आधार बनाने वाली यह दृष्टि तुलसी की भक्ति को व्यापक लोकचेतना से जोड़ती है। तुलसी के काव्य में भक्ति की गरिमा केवल आराध्य के प्रति प्रेम में नहीं, बल्कि मनुष्य के प्रति व्यवहार में भी दिखाई देती है। सामाजिक समता के प्रश्न पर तुलसी का अध्ययन करते समय ऐतिहासिक संदर्भ, काव्यगत संरचना और आलोचकीय व्याख्याओं—तीनों को साथ रखना आवश्यक है। रामविलास शर्मा की स्थापना इसी विमर्श को एक विशिष्ट सामाजिक-ऐतिहासिक दिशा देती है।

किसी रचना में अपने समय की सामाजिक मानसिकता, मूल्य-संघर्ष और सांस्कृतिक आकांक्षाओं की उपस्थिति भी युगबोध का आधार है। तुलसी को इसी व्यापक अर्थ में पढ़ा जाना चाहिए। डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी का कहना है — “तुलसी की राम कथा तुलसी के

युग की कथा है।⁸ रामकथा का आधार प्राचीन है, किंतु तुलसी का प्रस्तुतीकरण उनके समय की सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना से संबद्ध है। पौराणिक पात्रों के माध्यम से परिवार, सत्ता, कर्तव्य, नैतिकता, सामाजिक संबंध और लोकहित जैसे प्रश्नों को अभिव्यक्ति मिलती है। राम का वनगमन कर्तव्य और व्यक्तिगत इच्छा के संघर्ष का प्रसंग बनता है। भरत का चरित्र सत्ता के प्रति वैराग्य और नैतिक उत्तरदायित्व का उदाहरण प्रस्तुत करता है। रावण का चरित्र अनियंत्रित सत्ता, अहंकार और इच्छा के दुष्परिणामों को सामने लाता है। युगबोध का अर्थ केवल तत्कालीन घटनाओं का प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं है।

तुलसी के मूल्यांकन में आलोचकीय मतभेद रहे हैं। उनके साहित्य की सामाजिक सीमाओं और अंतर्विरोधों पर विचार करने वाली आलोचना भी है तथा उनकी सांस्कृतिक उपलब्धियों पर बल देने वाली परंपरा भी। रामविलास शर्मा मानते हैं— “दोनों ही तरह के ये आलोचक भारतीय जनता को खासकर हिन्दी भाषा जनता को तुलसीदास की सांस्कृतिक विरासत से वंचित कर देते हैं।⁹ इस कथन में तुलसी के समग्र मूल्यांकन की आवश्यकता व्यक्त होती है। किसी रचनाकार की ऐतिहासिक सीमाओं को स्वीकार करते हुए उसकी साहित्यिक और सांस्कृतिक उपलब्धियों को पहचानना आलोचना की संतुलित पद्धति का हिस्सा है। तुलसी की सांस्कृतिक विरासत हिन्दी भाषा, लोकपरंपरा और भारतीय सांस्कृतिक स्मृति में व्यापक रूप से है। तुलसी का पुनर्मूल्यांकन श्रद्धा और अस्वीकृति के किसी एक छोर पर ठहरने के बजाय आलोचनात्मक संतुलन के साथ किया जाना अधिक सार्थक है।

तुलसी के सौंदर्यबोध को समझने में नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की भूमिका अधिक है। डॉ. रमेश कुंतल मेघ के अनुसार — “कलात्मक सौंदर्य के बजाय नैतिक सौंदर्य और आध्यात्मिक सौंदर्य की तत्कालीन रुचि का प्रतिमान हुआ। सौंदर्य में दैवीय और दिव्य धर्म जुड़ गये, इसलिए सुख बहुत ही सीमित दूरी तक संवेदनशील आनन्द से सम्बन्ध हुआ।¹⁰ उनके यहाँ सौंदर्य केवल बाह्य रूप या दृश्य आकर्षण नहीं है। चरित्र की मर्यादा, त्याग, करुणा, प्रेम और लोकहित भी सौंदर्य के आधार बनते हैं।

तुलसी के प्रकृति-चित्रण में दृश्य और भाव का संबंध देखने को मिलता है। वन, पर्वत, नदी, ऋतु, वर्षा, प्रभात और संध्या जैसे प्राकृतिक प्रसंग कथा की भावभूमि निर्मित करते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने तुलसी के प्रकृति-चित्रण की सूक्ष्मता की प्रशंसा करते हुए लिखा है— “हिन्दी कवियों में प्राचीन संस्कृत कवियों का सा वह सूक्ष्म निरीक्षण नहीं है। जिससे प्राकृतिक दृश्यों का पूरा चित्र सामने खड़ा होता है, यदि किसी में वह बात थोड़ी बहुत है, तो गोस्वामी तुलसीदास जी में ही।¹¹ प्रकृति पात्रों की मानसिक अवस्थाओं और कथा की संवेदनात्मक स्थिति से जुड़ती है। प्रकृति का यह प्रयोग तुलसी के काव्य में सौंदर्यबोध को व्यापक बनाता है। प्राकृतिक दृश्य कथा की गति और भाव-संप्रेषण दोनों में योगदान करते हैं।

डॉ. उदयभानु सिंह तुलसी के साहित्यिक व्यक्तित्व की व्यापकता को संदर्भित करते हैं— “तुलसीदास महाकवि थे। वे काव्य स्रष्टा एवं जीवन द्रष्टा थे। वे प्रबन्धकार थे, उन्होंने महाकाव्य लिखा, मंगलगीत दिये। वे मुक्तककार भी थे। उन्होंने रचनाकार के रूप

प्रगीत मुक्तक लिखे, अगीत मुक्तक लिखे, उन्होंने अपनी रम्य रचनाओं से रसात्मक साहित्य की अपूर्व श्री वृद्धि की, उनके गौरव ग्रंथ हिन्दी साहित्य के महान ग्रंथ हैं। प्रेय और श्रेय का कवित्व एवं दर्शन का, सौन्दर्य और मंगल का उनके साहित्य की महती विशेषता है।¹² उदयभानु सिंह का मूल्यांकन तुलसी के साहित्य की विधागत और वैचारिक व्यापकता को सामने रखता है। तुलसी की रचनात्मकता एक प्रबंधकाव्य तक सीमित नहीं है। उनकी विभिन्न रचनाएँ अलग-अलग काव्यरूपों और भावभूमियों को सामने लाती हैं। ‘प्रेय और श्रेय’ तथा ‘सौंदर्य और मंगल’ का संबंध तुलसी की काव्य-दृष्टि को समझने में विशेष उपयोगी है। उनके यहाँ काव्यात्मक आनंद और जीवन-मूल्य एक-दूसरे से अलग नहीं होते।

तुलसी की लोकप्रियता में उनकी भाषा का योगदान ज्यादा है। आचार्य शुक्ल ने तुलसी की भाषा शैली को स्पष्ट करते हुए माना है कि— “पर सबसे बड़ी विशेषता (गोस्वामी जी की) है भाषा की सफाई और वाक्य रचना की निर्दोषता जो हिन्दी की किसी अन्य काव्य-कृतियों में नहीं पायी जाती है।¹³ तुलसी की भाषा में सहजता और काव्यात्मक गरिमा साथ-साथ मिलती है। लोकप्रचलित शब्दों, मुहावरों और संस्कृतनिष्ठ शब्दावली का प्रयोग प्रसंगानुकूल दिखाई देता है। कथानक की गति, संवादों की स्वाभाविकता और भावों की अभिव्यक्ति भाषा को प्रभावशाली बनाती है। अवधी को उन्होंने व्यापक काव्यात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की। भाषा की यह क्षमता रामचरितमानस को विद्वत्त्वर्ग और सामान्य जन, दोनों से जोड़ती है।

तुलसी के आधुनिक आलोचनात्मक मूल्यांकन में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की भूमिका उल्लेखनीय है। डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार— “शुक्ल जी ने युगबोध अर्जित किया था। वे अपने समय तक आगे बढ़े हुए थे। शुक्ल जी ने तुलसी को आधुनिक सन्दर्भों से जोड़ा। वे लोकप्रिय पहले से थे, शुक्ल जी उन्हें महान कवि के रूप में सामने लाये।¹⁴ शुक्ल की आलोचना ने तुलसी को केवल धार्मिक कवि के रूप में नहीं देखा। प्रकृति-चित्रण, भाषा, चरित्र-निर्माण, भाव-संवेदना और लोकमंगल जैसे साहित्यिक आधारों पर तुलसी का मूल्यांकन किया गया। आधुनिक आलोचना में तुलसी की प्रतिष्ठा के निर्माण में शुक्ल का योगदान इस अर्थ में अधिक सार्थक है कि उन्होंने तुलसी के काव्यगत गुणों को व्यवस्थित आलोचनात्मक भाषा में सामने रखा।

डॉ. बलदेव प्रसाद मिश्र तुलसी के काव्य में हृदय और विवेक के संतुलन को नई दिशा देते हुए रेखांकित करते हैं— “गोस्वामी जी ने जहाँ एक ओर सर्वोत्कृष्ट हृदयवाद को विवेक से सुदृढ़ आसन पर संस्थापित कर रखा है वहाँ दूसरी ओर चरम सीमा तक पहुँचे हुए बुद्धिवाद को वे वैराग्य की अचल, अटल, नीव से हिलने नहीं देते।¹⁵ तुलसी के यहाँ भाव और विवेक का संतुलन उनके पात्रों और घटनाओं में दिखाई देता है। राम की करुणा विवेकहीन भावुकता नहीं है और उनका निर्णय कठोर बुद्धिवाद नहीं बनता। भरत का त्याग, हनुमान की भक्ति और विभीषण का निर्णय भाव तथा विवेक के परस्पर संबंध को सामने लाते हैं। तुलसी की जीवन-दृष्टि में हृदय और बुद्धि परस्पर विरोधी शक्तियाँ नहीं हैं। दोनों मानवीय आचरण के मूल्याधारित आधार को मजबूत करते हैं।

कबीर और तुलसी को हिन्दी साहित्य में प्रायः परस्पर विरोधी कवियों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। आचार्य विष्णुकांत शास्त्री

इस धारणा की समीक्षा करते हुए कहते हैं- “कबीर और तुलसी का विरोध इतना अधिक उछाला गया है कि दोनों ही विरोधी खेमों के नायक दिखाई देते हैं।”¹⁶ विष्णुकांत शास्त्री ने ज्ञान, दीनता और प्रेम जैसे तत्वों के आधार पर दोनों कवियों के बीच आंतरिक साम्य की ओर संकेत किया है। कबीर और तुलसी की सामाजिक दृष्टि, भाषा और काव्य-पद्धति में पर्याप्त अंतर है, किंतु मानवीय चेतना के स्तर पर कुछ साझा मूल्य दिखाई देते हैं। कबीर रूढ़ियों और बाह्य आडंबर के विरुद्ध प्रत्यक्ष प्रतिरोध की भाषा अपनाते हैं, जबकि तुलसी धार्मिक-सांस्कृतिक परंपरा के भीतर से जीवन-मूल्यों का पुनर्गठन करते हैं। अंतर और साम्य दोनों को ध्यान में रखकर किया गया अध्ययन भक्तिकालीन साहित्य की विविधता को अधिक व्यापक रूप में समझने में सहायक है।

“इतिहास और साहित्य का इतिहास तुलसीदास को केवल एक महान कवि तथा दार्शनिक, धार्मिक एवं नैतिक विचारों के प्रवर्तक के रूप में ही नहीं देखता किन्तु उसे उस व्यक्ति के रूप में भी देखता है जो कि अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा तथा अपनी ऊँची नैतिक मनोदृष्टि के द्वारा अपने देशवासियों की सहायता के लिए कठिन परीक्षा के वर्षों में आया जबकि भारत की प्राचीन संस्कृति बहुत बड़ी विपत्ति से संकटग्रस्त थी।”¹⁷ प्रो. बारान्निकोव का यह कथन तुलसी की सांस्कृतिक भूमिका को व्यापक ऐतिहासिक संदर्भ को इंगित करता है। इस दृष्टि में तुलसी का साहित्य सांस्कृतिक स्मृति और नैतिक चेतना के संरक्षण से जुड़ा है। रामकथा के माध्यम से तुलसी ने धर्म, नीति, परिवार, समाज और राज्य से संबंधित मूल्यों को एक साझा सांस्कृतिक आख्यान में रूपांतरित किया। लोकभाषा में रामकथा की प्रस्तुति ने भारतीय सांस्कृतिक आख्यान को जनसामान्य के अनुभव से जोड़ा। तुलसी का साहित्य सांस्कृतिक निरंतरता और नैतिक पुनर्स्मरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

उपर्युक्त आलोचकीय स्थापनाओं को एक साथ देखने पर तुलसी की रचनात्मक चेतना में समन्वय का व्यापक स्वरूप ध्वनित होता है। उनके साहित्य में भक्ति और सामाजिकता का संबंध है। भक्ति व्यक्ति को समाज से अलग नहीं करती, बल्कि उसके आचरण और उत्तरदायित्व को प्रभावित करती है। आध्यात्मिकता और लौकिकता साथ-साथ उपस्थित हैं। रामभक्ति के साथ परिवार, राज्य, समाज, सत्ता और लोकजीवन के प्रश्न भी आते हैं। हृदय और बुद्धि के बीच संतुलन है। भावनात्मकता को विवेक दिशा देता है और विवेक को संवेदना मानवीय बनाती है। सौंदर्य और मंगल परस्पर संबद्ध हैं। सौंदर्य नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों से जुड़कर अर्थ ग्रहण करता है। लोक और शास्त्र का संवाद तुलसी की रचनात्मकता की आधारभूमि है। शास्त्रीय रामकथा लोकभाषा और लोकानुभव के माध्यम से नया सांस्कृतिक रूप प्राप्त करती है। परंपरा और युगबोध के बीच संबंध स्थापित होता है। पुराकथा के भीतर तत्कालीन सामाजिक और सांस्कृतिक अनुभवों को अभिव्यक्ति मिलती है। काव्य और दर्शन का संबंध तुलसी की रचनाओं को वैचारिक गहराई प्रदान करता है। यह समन्वय तुलसी के काव्य को एकांगी होने से बचाता है और उसके भीतर विविध जीवनानुभवों के लिए स्थान निर्मित करता है।

समग्र दृष्टि से देखें तो तुलसी का पुनर्पाठ वर्तमान समय में भी आवश्यक है। मनुष्य के आचरण, सामाजिक उत्तरदायित्व, नैतिक

विवेक, लोककल्याण और सांस्कृतिक स्मृति से जुड़े प्रश्न उनके साहित्य में आज भी विमर्श की संभावनाएँ रखते हैं। तुलसी की प्रासंगिकता किसी स्थिर आदर्श की पुनरावृत्ति में नहीं, बल्कि उनके साहित्य में निहित बहुस्तरीय जीवन-दृष्टि के आलोचनात्मक अध्ययन में है। इतिहास, समाज, संस्कृति, सौंदर्य और मानवीय संवेदना की संयुक्त भूमि पर तुलसी को पढ़ने से उनके कृतित्व की व्यापकता अधिक स्पष्ट रूप में सामने आती है।

संदर्भ सूची

1. रामविलास शर्मा, भारतीय सौंदर्यबोध और तुलसीदास, साहित्य अकादमी, दिल्ली, 2001 ई., पृ. 446
2. डॉ. रामचन्द्र तिवारी, कथा राम कै गूढ़, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1999 ई., पृ. 91
3. डॉ. रामचन्द्र तिवारी, कथा राम कै गूढ़, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1999 ई., पृ. 73
4. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2002 ई., पृ. 92
5. डॉ. रामचन्द्र तिवारी, कथा राम कै गूढ़, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1999 ई., पृ. 75
6. डॉ. रामचन्द्र तिवारी, साक्षात्कार, सम्पा. हरि भटनागर, दिसम्बर 2004, पृ. 92
7. रामविलास शर्मा, भारतीय सौंदर्यबोध और तुलसीदास, साहित्य अकादमी, दिल्ली, 2001 ई., पृ. 460
8. विश्वनाथ त्रिपाठी, लोकवादी तुलसीदास, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1999 ई., पृ. 31
9. रामविलास शर्मा, भारतीय सौंदर्यबोध और तुलसीदास, साहित्य अकादमी, दिल्ली, 2001 ई., पृ. 455
10. डॉ. रमेश कुंतल मेघ, तुलसी आधुनिक वातायन से, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2007 ई., पृ. 50-51
11. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, गोस्वामी तुलसीदास, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2004 ई., पृ. 111
12. डॉ. उदयभानु सिंह, तुलसी काव्य मीमांसा, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2002 ई., पृ. 424
13. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, गोस्वामी तुलसीदास, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2004 ई., पृ. 134
14. विश्वनाथ त्रिपाठी, हिन्दी आलोचना, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2006 ई., पृ. 74
15. बलदेव प्रसाद मिश्र, तुलसीदर्शन, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1977 ई., पृ. 311
16. आचार्य विष्णुकांत शास्त्री, तुलसी के हिय हेरि, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1990 ई., पृ. 251
17. डॉ. केसरी नारायण शुक्ल, मानस रूपी भूमिका, विद्या मंदिर, रानी, कटरा, लखनऊ, 1995 ई., पृ. 9